उदय

बनाम

कर्नाटक राज्य

19 फरवरी, 2003

[एन. संतोश हेगड़े और बी.पी. सिंह, जेजे.]

दंड संहिता, 1860-धारा 376 और 90-बलात्संग-19 वर्षीय अभियोक्त्री ने आरोप लगाया कि आरोपी उसके साथ यौन संबंध बना रहा था, जिसके लिये उसे इस वचन पर सहमति देने के लिये प्रेरित किया गया कि वह उससे शादी करेगा-आरोपी अपने वादे में विफल रहा और अभियोक्त्री गर्भवती हो गई-धारा 376 के तहत परिवाद-दोषसिद्धि-उच्च न्यायालय ने उसी को बरकरार रखा-औचित्य-अभिनिर्धारित अभिलेख पर साक्ष्य इस निष्कर्ष की ओर ले जाता है कि अभियोक्त्री ने स्वतंत्र रूप से, स्वेच्छा से और सचेत रूप से अभियुक्त के साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमति दी और उसकी सहमति तथ्य के किसी भी भ्रम के परिणामस्वरूप नहीं थी-साथ ही यह साबित करने के लिए कोई सबूत नहीं है कि अभियुक्त ने कभी भी उससे शादी करने का इरादा नहीं किया था-इस प्रकार दोषसिद्धि को

अपास्त कर दिया गया। धारा 90-भय या तथ्य के भ्रम में दी जाने वाली सहमति-लागू होना-विवेचन किया।

19 वर्षीय अभियोक्त्री के अनुसार-अपीलार्थी ने उसके साथ यौन संबंध बनाए। अपीलार्थी ने उसे इस वादे पर सहमति देने के लिए प्रेरित किया कि वह उससे शादी करेगा। इस तरह की गलत धारणा के तहत अभियोक्त्री ने, जिसने अपीलार्थी से गहरा प्यार करने का दावा किया था, उसके साथ कई महीनों तक यौन संबंध बनाए रखा। नतीजतन वह गर्भवती हो गई और तब भी अपीलार्थी ने अभियोक्त्री से शादी नहीं की, हालांकि उसने कई मौकों पर वादा किया था। इसके बाद अभियोक्त्री ने अपीलार्थी के खिलाफ आईपीसी की धारा 376 के तहत परिवाद पेश किया। सत्र न्यायाधीश ने अपीलार्थी को बलात्संग अपराध के लिये दोषी ठहराया और सजा सुनाई। उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को बरकरार रखा। इसलिए वर्तमान अपील।

अपीलार्थी ने तर्क दिया कि यह पता लगाने के लिये कि क्या बलात्संग का अपराध घटित हुआ है, किसी को केवल धारा 375 को देखना होगा; कि धारा 90 के तहत भी सहमति केवल तभी दूषित होती है जब इसे तथ्य के भ्रम के तहत दिया जाता है; कि यह विश्वास कि विवाह का वादा पूरा करने के लिए था, तथ्य का भ्रम नहीं है; कि तथ्य का भ्रम केवल तभी उत्पन्न होगा, जब वह कार्य जिसके लिये सहमति दी गई है, सहमति देने वाला व्यक्ति यह विश्वास करता है कि वह कुछ अन्य के लिये

सहमति देता है और उस बहाने यौन संभोग किया जाता है; और ऐसे मामलों में यह नहीं कहा जा सकता है कि पीड़ित ने यौन संभोग के लिए सहमति दी थी।

अपील अनुज्ञात करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः

1.1. अभियोक्त्री द्वारा एक ऐसे व्यक्ति के साथ, जिसे वह गहरा प्यार करती है, यौन संबंध बनाने के लिए इस वादे पर दी गई सहमति, कि वह बाद में उससे शादी करेगा, तथ्य के भ्रम के तहत दी गई नहीं कही जा सकती और एक झूठा वादा भारतीय दंड संहिता के अर्थ के भीतर तथ्य का भ्रम नहीं है। इसके अलावा यह निर्धारित करने के लिए कोई स्ट्रैट जैकेट फॉर्मूला नहीं है कि क्या अभियोक्त्री द्वारा यौन संभोग के लिए दी गई सहमति स्वैच्छिक है, या क्या यह तथ्य के भ्रम के तहत दी गई है। अंतिम विश्लेषण में, न्यायालयों द्वारा निर्धारित परीक्षण सहमति के प्रश्न पर विचार करते समय न्यायिक मस्तिष्क को सर्वोत्तम मार्गदर्शन प्रदान करते हैं, लेकिन न्यायालय को, प्रत्येक मामले में, किसी निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले, अपने समक्ष साक्ष्य और आसपास की परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक मामले के अपने विशिष्ट तथ्य हैं जो इस प्रश्न पर असर डाल सकते हैं कि क्या सहमति स्वैच्छिक थी, या तथ्य के भ्रम के तहत दी गई थी। इसे इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सबूतों का वजन

भी करना चाहिए कि अपराध के प्रत्येक तत्व को साबित करने का बोझ अभियोजन पक्ष पर है, सहमति का अभाव उनमें से एक है। [234-ई-जी]

1.2. मौजूदा मामले में, अभियोक्त्री एक बड़ी लड़की थी जो एक कॉलेज में पढ़ रही थी। वह अपीलार्थी से गहरा प्यार करती थी। हालाँकि, वह इस तथ्य से अवगत थी कि चूंकि वे अलग-अलग जातियों से ताल्लुक रखते थे, इसलिए विवाह संभव नहीं था। किसी भी स्थिति में, उनके विवाह के प्रस्ताव का उनके परिवार के सदस्यों द्वारा गंभीरता से विरोध किया जाना तय था। वह स्वीकार करती है कि उसने अपीलार्थी को ऐसा तब बताया था जब उसने उसे पहली बार प्रस्ताव दिया था। उसके पास, जिस कार्य के लिये वह सहमति दे रही है, उसके महत्व और नैतिक गुणवत्ता को समझने के लिए पर्याप्त बुद्धि थी। यही कारण है कि जब तक वह रख सकती थी, उसने इसे गुप्त रखा। इसके बावजूद, उसने अपीलार्थी के प्रस्तावों का विरोध नहीं किया और वास्तव में इसके आगे झुक गईं। इस प्रकार उसने प्रतिरोध और सहमति के बीच एक विकल्प का स्वतंत्र रूप से प्रयोग किया। उसे इस कृत्य के परिणामों को जानना चाहिए था, विशेष रूप से जब वह इस तथ्य से अवगत थी कि उनकी शादी जाति के आधार पर नहीं हो सकती है। इन सभी परिस्थितियों से यह निष्कर्ष निकलता है कि उसने स्वतंत्र रूप से, स्वेच्छा से, और जानबूझकर अपीलार्थी के साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमति दी, और उसकी सहमति तथ्य के किसी भी भ्रम के परिणामस्वरूप नहीं थी। इसके अलावा निश्चायक रूप से यह साबित करने

के लिए कोई सबूत नहीं है कि अपीलार्थी का उससे शादी करने का इरादा कभी नहीं था। [244-डी-जी]

1.3. इस प्रकार के मामले में आईपीसी की धारा 90 को लागू करने के लिए यह दिखाया जाना चाहिए कि सहमति तथ्य के भ्रम के तहत दी गई थी और यह साबित किया जाना चाहिए कि सहमति प्राप्त करने वाले व्यक्ति को पता था, या यह मानने का कारण था कि सहमति इस तरह के भ्रम के परिणामस्वरूप दी गई थी। मौजूदा मामले में शादी करने के वादे से प्रेरित होकर अभियोक्त्री का अपीलार्थी के साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमति देना संदिग्ध है। यह साबित करने के लिए शायद ही कोई सबूत है कि अपीलार्थी को पता था, या विश्वास करने का कारण था, कि अभियोक्त्री ने उसके साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमति उसके वादे के आधार पर इस विश्वास के परिणामस्वरूप दी थी कि वे नियत समय में शादी कर लेंगे। इसके विपरीत मामले की परिस्थितियाँ इस निष्कर्ष का समर्थन करती हैं कि अपीलार्थी के पास यह विश्वास करने का कारण था कि अभियोक्त्री द्वारा दी गई सहमति एक-दूसरे के लिए उनके गहरे प्यार का परिणाम थी जो विवादित नहीं है। वे अक्सर मिलते थे, और ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोक्त्री ने उसे स्वतंत्रता की अनुमति दी थी, जो केवल उस व्यक्ति को दी जाती है जिसके साथ वह गहरा प्यार करता है, वे कई बार एक-दूसरे से वादा करते हैं कि जो भी हो, वे शादी कर लेंगे। अभियोक्त्री ने कहा कि अपीलार्थी ने भी एक से अधिक अवसरों पर ऐसा वादा किया था।

ऐसी परिस्थितियों में, वादा सभी महत्व खो देता है, विशेष रूप से जब वे भावनाओं और जुनून से उबर जाते हैं और खुद को ऐसी स्थितियों और परिस्थितियों में पाते हैं जहां वे एक कमजोर क्षण में यौन संबंध बनाने के प्रलोभन के आगे झुक जाते हैं। मौजूदा मामले में, अभियोक्त्री ने अपीलार्थी के साथ, जिससे वह गहरा प्यार करती थी, यौन संबंध बनाने के लिये स्वेच्छा से सहमति दी, इसलिए नहीं कि उसने उससे शादी करने का वादा किया था, बल्कि इसलिए कि वह भी उससे शादी करना चाहती थी। इस प्रकार, अपीलार्थी के ज्ञान पर यह आरोप लगाना बहुत कठिन होगा कि अभियोक्त्री ने अपने वादे से उत्पन्न तथ्य के भ्रम के परिणामस्वरूप सहमति दी थी। किसी भी स्थिति में, अपीलार्थी के लिए यह जानना संभव नहीं था कि अभियोक्त्री के मन में क्या था जब उसने सहमति दी, क्योंकि सहमति देने के लिए उसके पास एक से अधिक कारण थे। [245-ए-एच]

राव हरनारायण सिंह बनाम राज्य, **एआईआर [1958] पंजाब 123**; *विजयन पिल्लई उर्फ बाबू बनाम केरल राज्य,* **[1989] 2 के.एल.जे.234;** *इन रि एंथनी एलाईस भक्तवत्सलू,* **एआईआर [1960] मद्रास 308;** *अर्जन राम बनाम राज्य,* **एआईआर [1960] पंजाब 303;** *गोपी शंकर बनाम राज्य,* **एआईआर [1967] राज. 159;** *भीमराव हरनूजी वंजारी बनाम महाराष्ट्र राज्य,* **1975 महा. एल जे 660;** *जयंती रानी पांडा बनाम पश्चिम बंगाल और अन्य राज्य,* **[1984] क्रिमीनल लॉ जर्नल 1535;** *हरि माझी बनाम राज्य,* **[1990] क्रिमीनल लॉ जर्नल 650;** *अभय प्रधान बनाम*

पश्चिम बंगाल राज्य, **[1999] क्रिमीनल लॉ जर्नल 3534;** *कर्नाटक राज्य बनाम एंथोनिडास,* **आईएलआर [2000] कर्ना. 266;** *नीलांबर गौडो बनाम* ***राज्य और अन्य [1982] क्रिमीनल लॉ जर्नल एनओसी 172 (उड़ीसा); सालेहा खातून बनाम बिहार और अन्य राज्य,*** **[1989] क्रिमीनल लॉ जर्नल 202** *और स्टेट ऑफ एच.पी. बनाम मांगो राम,* **[2000] 7 एससीसी 224,** *का उल्लेख किया गया है।*

होल्मन बनाम द क्वीन, **[1970] डब्ल्यू.ए.आर. 2;** *आर. बनाम ओलुगबोजा,* **[1981] डब्ल्यू.एल.आर. 585** *और क्वीन बनाम क्लेरेंस,* **[1888] 22 क्यूबीडी 23 और** *पीपल बनाम पेरी,* **26 कैल ऐप. 147,** *संदर्भित किया गया।*

स्ट्रौड्स जुडिशियल डिक्शनरी, **(पाँचवाँ संस्करण) पेज 510** *और स्थायी संस्करण खंड* **8 ए, पेज 205, संदर्भित किया गया।**

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार; आपराधिक अपील संख्या 336/1996

उच्च न्यायालय, कर्नाटक के द्वारा आपराधिक अपील संख्या 428/1992 में पारित निर्णय और आदेश दिनांकित 20-04-1995 से।

आर.एस. हेगड़े और पी.पी. सिंह- अपीलार्थी की ओर से।

संजय आर. हेगड़े और सत्य मित्रा- प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय,

द्वारा बी.पी. सिंह, जे. विशेष अनुमति द्वारा यह अपील बैंगलोर स्थित कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा आपराधिक अपील संख्या 428/1992 में पारित निर्णय व आदेश दिनांकित 20 अप्रैल, 1995 के खिलाफ पेश की गई है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने अपील को खारिज करते हुए और अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत की गई दोषसिद्धि को कायम रखते हुए सजा को घटाकर दो वर्ष का कठोर कारावास और 5,000 रूपये जुर्माना तथा अदम अदायगी जुर्माना में छह माह के अतिरिक्त कठोर कारावास तक कम कर दिया। इससे पहले सत्र न्यायाधीश, कारवार, जिनके समक्ष अपीलार्थी का सेशन प्रकरण संख्या 16/90 में विचारण हुआ था, ने अपने निर्णय एवं आदेश दिनांकित 27 नवंबर, 1992 के द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत सात साल का कठोर कारावास और 20,000 रुपये का जुर्माना और अदम अदायगी जुर्माना में छह माह के अतिरिक्त कारावास की सजा सुनाई। उन्होंने यह भी निर्देश दिया कि जुर्माने में से, यदि वसूल होता है, 10,000 रूपये की राशि अभियोक्त्री/शिकायतकर्ता को दी जाए। ट्रायल कोर्ट तथा साथ ही उच्च न्यायालय ने समवर्ती रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि यद्यपि अभियोक्त्री ने अपीलार्थी के साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमति दी थी, यह सहमति कपट और धोखे से प्राप्त की थी, क्योंकि अपीलार्थी ने उसे प्रेरित किया कि इस वादे पर सहमति दें कि वह उससे शादी करेगा। यह इस तरह के तथ्य के भ्रम के तहत थी कि उसके बाद कई महीनों तक

अभियोक्त्री, जिसने अभियुक्त के साथ गहरे प्यार में होने का दावा किया था, ने उसके साथ तब तक यौन संबंध बनाए रखें, जब तक उसे पता चला कि वह गर्भवती थी। जब अपीलार्थी शादी करने के लिये सहमत नहीं हुआ, तब उस प्रक्रम पर शिकायतकर्ता ने पुलिस स्टेशन में एक रिपोर्ट दर्ज की, जिसके अनुसरण में जांच की गई और अपीलार्थी को सत्र न्यायाधीश, कारवार के समक्ष मुकदमे के लिए लाया गया।

यह विवाद में नहीं है कि अभियोक्त्री, पीडब्लू-1 की आयु घटना की तारीख अर्थात अगस्त, 1988 के अंतिम सप्ताह या सितंबर, 1988 के पहले सप्ताह में लगभग 19 वर्ष थी। उसने बयान दिया है कि उसकी जन्म तिथि 6 अगस्त, 1969 थी। अपीलार्थी भी लगभग 20-21 वर्ष की आयु का एक युवक था जब यह घटना हुई, क्योंकि उसने वर्ष 1992 में 25 वर्ष की आयु होने का दावा किया था जब उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के तहत परीक्षित किया गया। इसलिए, इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि घटना की तारीख को अभियोक्त्री की आयु 16 वर्ष से अधिक थी। अभियोक्त्री एक कॉलेज में पढ़ रही थी और मजाली गांवगेरी में अपने माता-पिता, भाइयों और बहनों के साथ रह रही थी। अपने बयान में, उसने कहा कि अपीलार्थी उसके बड़े भाई पीडब्लू-3 जगदीश का दोस्त था। अपीलार्थी पड़ोस में रहता था और लगभग रोज उसके घर जाता था और परिवार के अन्य सदस्यों के अलावा उससे भी बात करता था। उनके बीच दोस्ती हो गई और एक दिन अपीलार्थी ने उसे उससे शादी करने का प्रस्ताव दिया। अभियोक्त्री ने उसे

बताया कि चूंकि वे अलग-अलग जातियों से हैं, इसलिए ऐसी शादी संभव नहीं थी। अभियोक्त्री तमिलनाडु की मूल निवासी है और गौंडर समुदाय की है, जबकि अपीलार्थी दैवन्या ब्राहिम होने का दावा करता है। हालाँकि, यह विवादित नहीं है कि उन्हें एक-दूसरे से प्यार हो गया था, लेकिन अभियोक्त्री ने अपने माता-पिता की उपस्थिति में अपीलार्थी से बात करने से परहेज किया।

अगस्त, 1988 के अंतिम सप्ताह या सितंबर, 1988 के पहले सप्ताह में रात के लगभग 12 बजे जब वह पढ़ रही थी, अपीलार्थी कमरे की खिड़की पर आया और उससे बात करने के लिये उसे बाहर बुलाया। चूँकि वह उससे गहरा प्यार करती थी, इसलिए उसने उसके निमंत्रण का जवाब दिया और उसके बाद वे उस स्थान पर गए जहाँ अपीलार्थी का घर निर्माणाधीन था। अपीलार्थी ने उससे बात की और उसके बाद उसे चूमा और उसे गले लगाया और उससे शादी करने का वादा किया। उसने उसके साथ यौन संबंध भी बनाए। वह यौन संबंध बनाने के लिए तैयार नहीं थी, लेकिन परिस्थितिवश वह यौन संबंध बनाने के लिए सहमत हो गई, क्योंकि आरोपी ने उससे शादी करने का वादा किया था। इसके बाद वे मिलते रहे और अक्सर बाहर जाते रहे। इस अवधि के दौरान भी, अपीलार्थी ने कई बार कहा था कि वह उससे शादी करेगा। वह यह भी स्वीकार करती है कि उसने उसके साथ लगभग 15-20 बार यौन संबंध बनाए थे और वे सप्ताह में एक या दो बार यौन संबंध बनाते थे। वह यह भी मानती है कि उन दोनों को कई व्यक्तियों

ने एक साथ देखा था, जिनका नाम उसने अपने बयान में लिया है। वनमाला, जिसने उसे देखा था, जब उससे इस संबंध के बारे में पूछा, तो उसने उसे बताया कि वे एक-दूसरे के प्यार में पागल थे और अपीलार्थी ने उससे शादी करने का वादा किया था। उसने उससे यह भी अनुरोध किया कि वह इस तथ्य को किसी को न बताए।

अभियोक्त्री के अनुसार जब भी वह अपीलार्थी से शादी की बात करती, उसने उसे आश्वासन दिया कि वह घर का निर्माण पूरा होने के बाद उससे शादी करेगा, और यह एक पंजीकृत शादी होगी। यह स्थिति तब तक जारी रही जब तक उसे पता नहीं चला कि वह गर्भवती है। उसने अपीलार्थी को गर्भावस्था के बारे में बताया लेकिन उसने उसे आश्वासन दिया कि उसे चिंता नहीं करनी चाहिए और कि वह कुछ समय बाद उससे शादी कर लेगा। उसकी माँ का संदेह गर्भावस्था के छठे महीने के दौरान जागा और इसलिए, अपनी माँ को सब कुछ बताने के लिए मजबूर हो गई। उसने अपीलार्थी को बताया कि उसने अपनी माँ को सब कुछ बता दिया है, और अपीलार्थी ने उसे फिर से आश्वासन दिया कि वह उसे किसी अन्य स्थान पर ले जाएगा और शादी कर लेगा। धीरे-धीरे जब दूसरों को इस संबंध और उसकी गर्भावस्था के बारे में पता चला, तो उसके भाई, पीडब्लू. 3 ने अपीलार्थी से पूछा कि क्या वह उससे शादी करेगा। अपीलार्थी ने उसके भाई से कहा कि वह उससे शादी करेगा, लेकिन इस तथ्य को उसके (अपीलार्थी के) माता-पिता के सामने प्रकट नहीं किया जाना चाहिए। गर्भावस्था के 8 वें

महीने में अपीलार्थी ने उसे अपने साथ जाने के लिए तैयार रहने के लिए कहा और यह योजना बनाई गई कि वे सुबह जल्दी चले जाएँगे। अपीलार्थी पेश नहीं हुआ, लेकिन अपीलार्थी के चचेरे भाई ने उसे सूचित किया कि अपीलार्थी सांगली चला गया। आठ दिन बाद जब अपीलार्थी सांगली से लौटा, तो उसके भाई ने फिर से अपीलार्थी से पूछा कि क्या वह उससे शादी करेगा। अपीलार्थी ने अपने भाई से कहा कि वह उसे किसी अन्य स्थान पर रखे और वह उसके रखरखाव का खर्च उठाएगा और उसके प्रसव के बाद और उसके घर का निर्माण पूरा करने के बाद वह उससे शादी करेगा। यह सुझाव अभियोक्त्री और उसके भाई को स्वीकार्य नहीं था और इससे अपीलार्थी नाराज हो गया। अगले दिन जब उसका भाई अपीलार्थी से मिलना चाहता था तो वह अपने घर से बाहर नहीं निकला। उसके बाद दोनों परिवारों की महिला सदस्यों के बीच झगड़ा हो गया। चूंकि अपीलार्थी ने वादे के अनुसार उससे शादी नहीं की, इसलिए उसने 12 मई, 1989 को पुलिस में शिकायत दर्ज कराई जो पीडब्लू-10, पीएसआई द्वारा दर्ज की गई। 29 मई, 1989 को उसने एक बच्चे को जन्म दिया। 13 मई, 1989 को पीडब्लू-4 डॉक्टर द्वारा उसकी जाँच की गई, जिसने यह राय दी कि अभियोक्त्री 18-20 वर्ष की उम्र की थी। जिरह में उससे अन्य लड़कों के साथ उसके अंतरंगता के बारे में सवाल पूछे गए थे जिसे उसने अस्वीकार कर दिया।

अभियोजन के मामले को साबित करने के लिए अन्य गवाहों के अलावा, पीडब्लू 2, अभियोक्त्री की माँ और पीडब्लू 3, अभियोक्त्री के भाई का परीक्षण किया गया।

अपीलार्थी का बचाव एक स्पष्ट इनकार था।

अभियोक्त्री के साक्ष्य को स्वीकार करते हुए सत्र न्यायाधीश ने निष्कर्ष निकाला कि यद्यपि उसने अपीलार्थी के साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमति दी थी, लेकिन वह सहमति धारा 90 के संबंध में आई.पी.सी. की धारा 375 द्वितीय के अर्थ के भीतर सहमति नहीं थी। उनके अनुसार सहमति शादी का झूठा वादा करके प्राप्त की गई थी और इसलिए, यह कपट एवं मिथ्या व्यपदेशन से प्राप्त सहमति थी। इसलिए, उन्होंने अभिनिर्धारित किया कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, अपीलार्थी ने अभियोक्त्री के साथ उसकी सहमति के बिना यौन संबंध बनाए थे और इसलिए, वह भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत दंडनीय बलात्संग के अपराध का दोषी था। उच्च न्यायालय ने अपील में समान कारणों से निचली अदालत के निष्कर्ष की पुष्टि की।

हम शुरूवात में ही भारतीय दंड संहिता के संगत प्रावधानों, धारा 376 और धारा 90 पर विचार करते है, जो इस प्रकार है:

"375. बलात्संग- जो पुरूष एतस्मिन् पश्चात अपवादित दशा के सिवाय किसी स्त्री के साथ निम्निलिखत छह भाँति

की परिस्थितियों में से किसी परिस्थिति में मैथुन करता है, वह पुरूष ''बलात्संग'' करता है, यह कहा जाता है:

पहला- उस स्त्री की इच्छा के विरूद्ध।

दूसरा- उस स्त्री की सहमति के बिना।

तीसरा- उस स्त्री की सम्मति से, जबकि उसकी सम्मति, उसे या ऐसी किसी व्यक्ति को, जिससे वह हितबद्ध है, मृत्यु या उपहति के भय में डालकर अभिप्राप्त की गई है।

चौथा- उस स्त्री की सम्मति से, जबकि वह पुरूष यह जानता है कि वह उस स्त्री का पति नहीं है और उस स्त्री ने सम्मति इसलिए दी है कि वह विश्वास करती है, कि वह ऐसा पुरूष है जिससे वह विधिपूर्वक विवाहित है या विवाहित होने का विश्वास करती है।

पाँचवा- उस स्त्री की सम्मति से, जबकि ऐसी सम्मति देने के समय वह विकृतचित या मत्तता के कारण या उस पुरूष द्वारा व्यक्तिगत रूप में या किसी अन्य व्यक्ति के माध्यम से कोई संज्ञा शून्यकारी या अस्वास्थ्यकर पदार्थ दिए जाने के कारण, उस बात की, जिसके बारे में वह सम्मति देती है, प्रकृति और परिणामों को समझने में असमर्थ है।

छठा- उस स्त्री की सम्मति से या बिना सम्मति के, जबकि वह सोलह वर्ष से कम आयु की है।

स्पष्टीकरण- बलात्संग के अपराध के लिए आवश्यक मैथुन गठित करने के लिए प्रवेशन पर्याप्त है।

अपवाद- पुरूष का अपनी पत्नी के साथ मैथुन बलात्संग नहीं है जबकि पत्नी पन्द्रह वर्ष से कम आयु की नहीं है।"

"90. सम्मति, जिसके संबंध में यह ज्ञात हो कि वह भय या भ्रम के अधीन दी गई है- कोई सम्मति ऐसी सम्मति नहीं है जैसी इस संहिता की किसी धारा से आशयित है, यदि वह सम्मति किसी व्यक्ति ने क्षति, भय के अधीन या तथ्य के भ्रम के अधीन दी हो, और यदि कार्य करने वाला व्यक्ति यह जानता हो या उसके पास विश्वास करने का कारण हो कि ऐसे भय या भ्रम के परिणामस्वरूप वह सम्मति दी गई थी; अथवा उन्मत्त व्यक्ति की सम्मति- यदि वह सम्मति ऐसे व्यक्ति ने दी हो जो चित्तविकृति या मत्तता के कारण उस बात की, जिसके लिए वह अपनी सम्मति देता है, प्रकृति और परिणाम को समझने में असमर्थ हो; अथवा शिशु की सम्मति- जब तक कि संदर्भ

से तत्प्रतिकूल प्रतीत न हो, यदि वह सम्मति ऐसे व्यक्ति ने दी हो जो बारह वर्ष से कम आयु का है।"

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने कहा है कि धारा 375 भारतीय दंड संहिता के संदर्भ में, जो एक विशेष प्रावधान है, भारतीय दंड संहिता की धारा 90 के सामान्य प्रावधान का अभियोजन पक्ष की सहायता के लिये बहुत अधिक नहीं था। उनके अनुसार धारा 375 तीसरी, चौथी और पाँचवी पूरी तरह से उन परिस्थितियों को गिनाती है, जिनमें अभियोक्त्री द्वारा दी गई सहमति दूषित हो जाती है और विधिक की दृष्टि में सहमति नहीं मानी जाती। उसके अनुसार यह पता लगाने के लिये कि क्या बलात्संग का अपराध घटित हुआ है, किसी को केवल धारा 375 को देखना होगा। दूसरे, उनका कहना है कि धारा 90 के तहत भी सहमति केवल तभी दूषित होती है जब इसे तथ्य के भ्रम के तहत दिया जाता है। यह विश्वास कि विवाह का वादा पूरा करने के लिए था, तथ्य का भ्रम नहीं है। तथ्य का भ्रम का प्रश्न केवल तभी उत्पन्न होगा, जब वह कार्य जिसके लिये सहमति दी गई है, सहमति देने वाला व्यक्ति यह विश्वास करता है कि वह कुछ अन्य के लिये सहमति देता है और उस बहाने यौन संभोग किया जाता है; और ऐसे मामलों में यह नहीं कहा जा सकता है कि पीड़ित ने यौन संभोग के लिए सहमति दी थी। उन्होंने अंग्रेजी मामले के संदर्भ से इस बात को स्पष्ट करने की कोशिश की, जहाँ एक चिकित्साकर्मी ने, एक लड़की, जिसे यह सदभावी विश्वास था कि उसका चिकित्सकीय उपचार किया जा रहा था, के साथ

यौन संबंध बनाये या जहाँ शल्य चिकित्सा करने का नाटक करते हुए एक शल्य चिकित्सक ने उसके साथ शारीरिक संबंध बनाए। स्ट्राउड के न्यायिक शब्दकोश (पाँचवाँ संस्करण) पृष्ठ 510 पर "सहमति" का निम्नलिखित अर्थ दिया गया हैः

> "सहमति तर्क का एक कार्य है, विचार-विमर्श के साथ, एक संतुलन के रूप में, मन दोनों तरफ अच्छे और बुरे का वजन करता है।
>
> यह *होल्मन बनाम रानी,* [1970] डब्ल्यू.ए.आर.2 के मामले को संदर्भित करता है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि "सहमति का गठन करने के लिये पूरी इच्छा होना आवश्यक नहीं है। संभोग के लिए एक महिला की सहमति संकोचपूर्ण, अनिच्छुक या द्वेषपूर्ण हो सकती है, लेकिन अगर वह जानबूझकर इसकी अनुमति देती है तो सहमति होती है। *आर. बनाम ओलुगबोजाः* [1981]3 डब्ल्यू.एल.आर. 585 में भी ऐसा ही अवलोकन था, जिसमें यह देखा गया था कि "बलात्संग में सहमति व्यापक रूप से, वास्तविक इच्छा से अनिच्छुक स्वीकृति तक मन की स्थितियों को शामिल करती है और सहमति का मुद्दा बिना किसी आगे के निर्देश के जूरी पर नहीं छोड़ा जाना चाहिए।" *क्वीन बनाम क्लेरेंसः*

[1888] 22 क्यू.बी.डी.23 *में* स्टीफन, जे. ने कहा-"मुझे ऐसा लगता है कि यह प्रस्ताव कि कपट आपराधिक मामलों में सहमति को दूषित करता है, अगर शब्द के पूर्ण अर्थ में और योग्यता के बिना लागू किया जाए तो यह सच नहीं है। एक गणितीय सूत्र के रूप में यह सच है कि यह सच होने के लिए बहुत छोटा है।" विल्स, जे. ने कहा कि "कपट द्वारा प्राप्त सहमति, सहमति नहीं है, यह वास्तव में या कानून में एक सामान्य प्रस्ताव के रूप में सच नहीं है। यदि कोई पुरुष सड़क पर किसी महिला से मिलता है और उसके साथ संभोग करने के लिए उसकी सहमति प्राप्त करने के लिए जानबूझकर उसे पैसे देता है, वह कपट से उसकी सहमति प्राप्त करता है, लेकिन यह कहना बचकाना होगा कि उसने सहमति नहीं दी थी।"

वर्डस एंड फ्रेजेज परमानेंट एडिशन खंड 8ए में पृष्ठ संख्या 205 में संदर्भित कुछ निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि "सहमति" का गठन करने के लिए वयस्क महिला की यौन कृत्य की प्रकृति और परिणाम के बारे में समझ बुद्धिमान समझ होनी चाहिए। बलात्संग को परिभाषित करने वाले दांडिक कानून में, सहमति इसके महत्व और नैतिक गुण के ज्ञान के आधार पर बुद्धि का प्रयोग होना चाहिए और प्रतिरोध और सहमति के बीच एक विकल्प होना चाहिए। कानूनी सहमति, जो बलात्संग के लिए

अभियोजन में पर्याप्त मानी जाएगी, उस व्यक्ति के लिए एक क्षमता मानती है जो किए गए कार्य की प्रकृति, इसके अनैतिक चरित्र और संभावित या प्राकृतिक परिणामों को समझने और उनकी सराहना करने के लिए सहमत है जो इसमें शामिल हो सकते हैं। (देखिएः *पीपल बनाम पेरी,* 26 कैल.अपील. 143)

भारत में न्यायालयों ने बड़े पैमाने पर इन परीक्षणों को यह पता लगाने के लिए अपनाया है कि क्या सहमति स्वैच्छिक थी या क्या इसे दूषित किया गया था ताकि कानूनी सहमति न हो। राव हरनारायण सिंह बनाम राज्यः ए.आई.आर. 1958 पंजाब 123 यह देखा गयाः-

> "अवश्यंभावी दबाव, स्वीकृति, गैर प्रतिरोध, या निष्क्रिय हार के कारण जब स्वैच्छिक संकाय या तो भय से घिर जाता है या दबाव से दूषित हो जाता है, तब मात्र असहाय समर्पण को कानून में 'सहमति नहीं माना जाएगा। सहमति, एक महिला की तरफ से, बलात्संग के आरोप के बचाव के रूप में, न केवल बुद्धि के प्रयोग के बाद, उस कार्य के महत्व एवं नैतिक गुणवता के ज्ञान के आधार पर स्वैच्छिक भागीदारी है, जो प्रतिरोध एवं अनुमति के बीच स्वतंत्र विकल्प का प्रयोग करने के बाद होनी चाहिए।

भय या आतंक के प्रभाव में उसके शरीर का समर्पण सहमति नहीं है। सहमति और समर्पण में अंतर होता है। प्रत्येक सहमति में समर्पण शामिल होता है लेकिन इसका विपरीत नहीं होता और केवल समर्पण के कार्य में सहमति शामिल नहीं होती है। बलात्संग जैसे आपराधिक चरित्र से मुक्त करने के लिए लडकी की सहमति, किसी की इच्छा या खुशी के लिये अनुमति वापस लेने की मौजूदा क्षमता व शक्ति के साथ मन द्वारा अच्छे और बुरे को दोनों तरफ तोलने के बाद विचार-विमर्श के साथ तर्क का एक कार्य होना चाहिए।"

केरल उच्च न्यायालय ने विजयन पिलाई उर्फ बाबू बनाम, केरल राज्य, (1989) 2 के.एल.जे. 234 के मामले में भी यही विचार व्यक्त किया था। बालाकृष्णन, जे., जैसा वे तब थे, द्वारा देखा गया थाः-

"10. तय किया जाने वाला महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या उपरोक्त पी.डब्लू.1 की ओर से सहमति व्यक्त करने के लिए परिस्थितियाँ पर्याप्त हैं। यह साबित करने के लिए कि अभियोक्त्री की ओर से सहमति थी यह स्थापित किया जाना चाहिए कि उसने कार्य करने के लिए उसकी शारीरिक और मानसिक शक्ति की स्वतंत्र व अबाधित स्थिति में, जिस

तरह से वह चाहती थी, रहते हुए खुद को समर्पित किया। सहमति विचार-विमर्श के साथ एक तर्कपूर्ण कार्य है, अवश्यंभावी दबाव, स्वीकृति, गैर प्रतिरोध, या निष्क्रिय हार के कारण मात्र असहाय समर्पण को कानून में 'सहमति नहीं माना जाएगा। सहमति का अर्थ है किसी व्यक्ति के मन में सक्रिय इच्छाशक्ति। क्या किया जाना है, इसके कार्य और ज्ञान को करने की अनुमति देना या जो कार्य किया जा रहा है उसकी प्रकृति की जानकारी सहमति के लिए आवश्यक है। सहमति, कार्य करने के लिए एक भौतिक शक्ति, एक नैतिक शक्ति कार्य करना और इन शक्तियों का एक गंभीर और दृढ़ और स्वतंत्र उपयोग करना मानती है। कार्य करने के लिए प्रत्येक सहमति में समर्पण करना शामिल है, लेकिन किसी भी तरह इसका विपरीत सही नहीं है कि केवल समर्पण में सहमति शामिल हो। जोविट'स डिक्सनरी ऑफ इंग्लिश लॉ द्वितीय संस्करण खंड 1 में सहमति की व्याख्या इस प्रकार की गई हैः

'मन द्वारा अच्छे और बुरे को दोनों तरफ तोलने के बाद विचार-विमर्श के साथ तर्क का एक कार्य होना चाहिए। सहमति में तीन चीजें हैं-एक शारीरिक शक्ति, एक मानसिक शक्ति और उनका स्वतंत्र एवं गंभीर उपयोग। इसलिए यह है

कि यदि सहमति धमकी, बल प्रयोग, मध्यस्थता से थोपना, उल्लंघन, आश्चर्यचकित करने या अनुचित प्रभाव द्वारा प्राप्त की जाए, इसे एक भ्रम के रूप में माना जाना चाहिए, न कि जानबूझकर और मन का स्वतंत्र कार्य।"

इन रि *एंथनी उर्फ भक्तवत्सलूः* ए.आई.आर 1960 मद्रास 308, में रामास्वामी, जे. *राव हरनारायण सिंह* के मामले (ऊपर) में निर्धारित सिद्धांत से पूरी तरह सहमत थे और उन्होंने कहाः

"एक महिला को केवल तभी सहमति देने के लिए कहा जाता है जब वह जैसा चाहती है वैसा करने के लिये अपनी शारीरिक एवं नैतिक शक्ति के स्वतंत्र एवं अबाधित कब्जे में रहते हुए खुद को समर्पित करने के लिये सहमत होती है। सहमति में किसी को रोकने या जिस कार्य के लिये सहमति दी जा रही है, उसे वापस लेने के लिये एक स्वतंत्र एवं बेरोकटोक अधिकार का प्रयोग शामिल है। यह हमेशा ही दूसरे के द्वारा जो किया जाना प्रस्तावित है और पहले की सहमति की स्वैच्छिक एवं सचेत स्वीकृति होती है।"

पंजाब उच्च न्यायालय ने *अर्जन राम बनाम राज्य,* ए.आई.आर. (1960) पंजाब 303, राजस्थान उच्च न्यायालय द्वारा *गोपी शंकर बनाम. राज्य,* ए.आई.आर. (1967) राज. 159 और बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा

भीमराव हरनूजी वंजारी बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1975) महा. एल.जे. 660 मामले में भी यही विचार दोहराया है।

कलकत्ता उच्च न्यायालय ने भी लगातार यह विचार रखा है कि भविष्य की अनिश्चित तिथि पर वादे को पूरा करने में विफलता हमेशा कार्य की शुरुआत में तथ्य के भ्रम के बराबर नहीं होती है। तथ्य के भ्रम के अर्थ में आने के लिए, तथ्य की तत्काल प्रासंगिकता होनी चाहिए। *जयंती रानी पांडा बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्यः* 1984 क्रिमीनल एल. जे. 1535 के तथ्य कुछ हद तक समान थे। आरोपी स्थानीय गाँव के स्कूल का शिक्षक था और अभियोक्त्री के आवास पर जाता था। एक दिन अभियोक्त्री के माता-पिता की अनुपस्थिति में उसने उसके लिए अपना प्यार और उससे शादी करने की इच्छा व्यक्त की। अभियोक्त्री भी इच्छुक थी और आरोपी ने अपने माता-पिता की सहमति प्राप्त करने के बाद उससे शादी करने का वादा किया। इस तरह के आश्वासन पर कार्रवाई करते हुए अभियोक्त्री ने आरोपी के साथ सहवास करना शुरू कर दिया और यह कई महीनों तक जारी रहा, इस अवधि के दौरान आरोपी ने उसके साथ कई रातें बिताईं। आखिरकार जब वह गर्भवती हुई और जोर देकर कहा कि शादी जल्द से जल्द की जानी चाहिए, तो आरोपी ने गर्भपात करने का सुझाव दिया और बाद में उससे शादी करने के लिए सहमत हो गया। चूंकि प्रस्ताव अभियोक्त्री को स्वीकार्य नहीं था, इसलिए आरोपी ने वादे को अस्वीकार कर दिया और उसके घर जाना बंद कर दिया। कलकत्ता उच्च न्यायालय की

एक खंड पीठ ने भारतीय दंड संहिता की धारा 90 के प्रावधानों पर ध्यान दिया और निष्कर्ष निकालाः

> "भविष्य में अनिश्चित तिथि पर वादा पूरा करने में साक्ष्य द्वारा बहुत अस्पष्ट कारणों से विफलता को हमेशा ही कार्य के शुरू में ही तथ्य का भ्रम नहीं माना जाता। तथ्य के भ्रम के अर्थ के भीतर आने के लिये, तथ्य को तत्काल प्रासंगिक होना चाहिए। बात अलग होती अगर सहमति यह विश्वास पैदा करके प्राप्त की गई थी कि वे पहले से ही शादीशुदा थे। ऐसे मामले में सहमति तथ्य के भ्रम का परिणाम कही जा सकती है। लेकिन यहाँ कथित तथ्य शादी करने का वादा है, हम नहीं जानते कि कब। यदि एक पूर्ण विकसित लड़की शादी के वादे पर यौन संभोग के कार्य के लिये सहमति देती है और जब तक वह गर्भवती नहीं हो जाती, इस गतिविधि में शामिल रहती है, यह उसकी ओर से व्यभिचार का कार्य है, न की तथ्य के भ्रम से प्रेरित कार्य। धारा 90 आईपीसी को ऐसे मामलों में लड़की के कृत्य को क्षमा करने हेतु सहायता के लिए, और दूसरे पर आरोप लगाने के लिये लागू नहीं किया जा सकता, जब तक कि न्यायालय आश्वस्त नहीं हो जाता कि अभियुक्त का शुरू से ही उससे शादी करने का इरादा कभी नहीं था।"

हरि माझी बनाम राज्य,(1990) क्रिमिनल.एल.जे. 650 और *अभय प्रधान बनाम पश्चिम बंगाल राज्य,* (1999) क्रिमिनल एल.जे. 3534 में भी इसी विचार को दोहराया गया था।

इस अपील में विवादित निर्णय और आदेश कर्नाटक उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिया गया है, लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि हाल के एक फैसले में, उसी उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ ने *कर्नाटक राज्य बनाम एंथोनीदास,* आई. एल. आर. (2000) कर. 266 विपरीत दृष्टिकोण अपनाया है। नीलांबर गौडो बनाम राज्य व अन्य, (1982) सीआरएल। एल. जे. एन. ओ. सी 172 (उड़ीसा) में उड़ीसा उच्च न्यायालय का भी यही दृष्टिकोण है।

पटना उच्च न्यायालय का केवल एक फैसला हमारे संज्ञान में लाया गया था, जो एक विपरीत दृष्टिकोण लेता प्रतीत होता है। (सालेहा खातून बनाम बिहार राज्य और अन्यः 1989 सीआरएल एल. जे. 202) हालाँकि, उस निर्णय में टिप्पणियों को उस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में समझा जाना चाहिए। यह एक ऐसा मामला था जिसमें मजिस्ट्रेट ने मुकदमे के लिए सत्र न्यायालय को मामला सौंपने के बजाय, इसी तरह के आरोपों पर, आई. पी. सी. की धारा 498 के तहत आरोप के लिए खुद मामले की सुनवाई करने के लिए आगे बढ़े और आरोपी को आई. पी. सी. की धारा 376 के तहत अपराध के लिए मुकदमे के लिए सत्र न्यायालय को सौंपने

से इनकार कर दिया। इस आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी और उन परिस्थितियों में न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 के तहत मजिस्ट्रेट की संकीर्ण अधिकारिता को ध्यान में रखते हुए, उन्हें साक्ष्य को संतुलित करने और तौलने की आवश्यकता नहीं थी जैसा कि निचली अदालत द्वारा किया जाता है। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उन्हें आई.पी.सी. की धारा 376 के तहत मुकदमे के लिए मामले को सत्र न्यायालय को सौंपना चाहिए था। इस पृष्ठभूमि में विद्वान न्यायाधीश ने निम्नलिखित टिप्पणियां कीः-

> "पहला बिंदु जो मेरा ध्यान आकर्षित करता है वह दूसरा घटक 'उसकी सहमति के बिना है। सहमति का मतलब हमेशा स्वतंत्र इच्छा या स्वैच्छिक होता है। इस मामले में सहमति कपट या प्रलोभन या महिला पर धोखे का प्रयोग करके इस बहाने से प्राप्त की थी कि अंततः वह शादी कर लेगी और इस बहाने के आधार पर उसने विपक्षी संख्या 2 को अपने साथ यौन संबंध बनाने की अनुमति दी थी। इसलिए, इस दूषित सहमति या इस प्रकृति की सहमति जो धोखे तथा कपट पर आधारित हो, से प्रथम दृष्टया, यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि यह 'सहमति से' था। अगर महिला को पता होता कि आखिरकार उसे त्याग दिया

जाएगा, तब ऊपर बताए गए तथ्य और परिस्थितियाँ और सामग्री से यह दर्शित होगा कि वह ऐसी सहमति देने से वंचित रही है। तब एक सवाल उठेगा कि उसका सहमति देने का उद्देश्य क्या था? यह एक कपट था जो उस पर किया गया या उसे झूठा आश्वासन देकर धोखा दिया गया था। इस तरह की सहमति इसे उसकी सहमति के बिना प्राप्त सहमति कहा जाना चाहिए। छलपूर्ण तरीकों से प्राप्त सहमति कोई सहमति नहीं है और बलात्संग की परिभाषा के तत्वों के परिधि में नहीं आती है।"

हम केवल यह देख सकते हैं कि पटना उच्च न्यायालय के एक और एकल न्यायाधीश ने 1990 बी. बी. सी. जे. 530 ने आई. पी. सी. की धारा 376 के तहत बनाए गए आरोप को रद्द करते हुए *जयंती रानी पांडा* (ऊपर) में कलकत्ता उच्च न्यायालय के फैसले को मानते हुए विपरीत दृष्टिकोण अपनाया है।

इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायिक राय की सर्वसम्मति इसके पक्ष में है कि अभियोक्त्री द्वारा एक ऐसे व्यक्ति के साथ, जिसे वह गहरा प्यार करती है, यौन संबंध बनाने के लिए इस वादे पर दी गई सहमति, कि वह बाद में उससे शादी करेगा, तथ्य के भ्रम के तहत दी गई नहीं कही जा सकती और एक झूठा वादा संहिता के अर्थ के भीतर तथ्य का भ्रम नहीं है।

इसके अलावा यह निर्धारित करने के लिए कोई स्ट्रैट जैकेट फॉर्मूला नहीं है कि क्या अभियोक्त्री द्वारा यौन संभोग के लिए दी गई सहमति स्वैच्छिक है, या क्या यह तथ्य के भ्रम के तहत दी गई है। अंतिम विश्लेषण में, न्यायालयों द्वारा निर्धारित परीक्षण सहमति के प्रश्न पर विचार करते समय न्यायिक मस्तिष्क को सर्वोत्तम मार्गदर्शन प्रदान करते हैं, लेकिन न्यायालय को, प्रत्येक मामले में, किसी निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले, अपने समक्ष साक्ष्य और आसपास की परिस्थितियों पर विचार करना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक मामले के अपने विशिष्ट तथ्य हैं जो इस प्रश्न पर असर डाल सकते हैं कि क्या सहमति स्वैच्छिक थी, या तथ्य के भ्रम के तहत दी गई थी। इसे इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सबूतों का वजन भी करना चाहिए कि अपराध के प्रत्येक तत्व को साबित करने का बोझ अभियोजन पक्ष पर है, सहमति का अभाव उनमें से एक है।

सहमति के विषय पर पंजाब उच्च न्यायालय द्वारा *राव हर नारायण सिंह* (ऊपर) में तथा केरल उच्च न्यायालय द्वारा विजयन पिल्लई, (ऊपर) में अपनाये गये दृष्टिकेण ने इस न्यायालय द्वारा एच.पी. बनाम मांगो राम, [2000] 7 एस. सी. सी. 224 अनुमोदन प्राप्त किया है। बालाकृष्णन, जे. ने न्यायालय की ओर से बोलते हुए कहाः

> "समग्र रूप से साक्ष्य इंगित करता है कि अभियोक्त्री द्वारा प्रतिरोध किया गया था और उसकी यौन क्रिया के लिए कोई

स्वैच्छिक भागीदारी नहीं थी। आतंक के डर से शरीर का समर्पण यौन कार्य के प्रति सहमति नहीं माना जा सकता। धारा 376 के उद्देश्य के लिये सहमति न केवल बुद्धि के प्रयोग के बाद, उस कार्य के महत्व एवं नैतिक गुणवता के ज्ञान के आधार पर स्वैच्छिक भागीदारी है, जो प्रतिरोध एवं अनुमति के बीच स्वतंत्र विकल्प का प्रयोग करने के बाद होनी चाहिए। सहमति थी या नहीं, यह सभी सुसंगत परिस्थितियों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद ही तय की जाएगी।"

ऐसे मामलों में न्यायालय द्वारा अपनाये जाने वाले दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए, अब हम अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य पर विचार करने के लिए आगे बढ़ेंगे। मौजूदा मामले में, अभियोक्त्री एक बड़ी लड़की थी जो एक कॉलेज में पढ़ रही थी। वह अपीलार्थी से गहरा प्यार करती थी। हालाँकि, वह इस तथ्य से अवगत थी कि चूंकि वे अलग-अलग जातियों से ताल्लुक रखते थे, इसलिए विवाह संभव नहीं था। किसी भी स्थिति में, उनके विवाह के प्रस्ताव का उनके परिवार के सदस्यों द्वारा गंभीरता से विरोध किया जाना तय था। वह स्वीकार करती है कि उसने अपीलार्थी को ऐसा तब बताया था जब उसने उसे पहली बार प्रस्ताव दिया था। उसके पास, जिस कार्य के लिये वह सहमति दे रही है, उसके महत्व और नैतिक गुणवत्ता को समझने के लिए पर्याप्त बुद्धि थी। यही कारण है कि जब तक

वह रख सकती थी, उसने इसे गुप्त रखा। इसके बावजूद, उसने अपीलार्थी के प्रस्तावों का विरोध नहीं किया और वास्तव में इसके आगे झुक गईं। इस प्रकार उसने प्रतिरोध और सहमति के बीच एक विकल्प का स्वतंत्र रूप से प्रयोग किया। उसे इस कृत्य के परिणामों को जानना चाहिए था, विशेष रूप से जब वह इस तथ्य से अवगत थी कि उनकी शादी जाति के आधार पर नहीं हो सकती है। इन सभी परिस्थितियों से यह निष्कर्ष निकलता है कि उसने स्वतंत्र रूप से, स्वेच्छा से, और जानबूझकर अपीलार्थी के साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमति दी, और उसकी सहमति तथ्य के किसी भी भ्रम के परिणामस्वरूप नहीं थी।

अभियोजन के रास्ते में एक और कठिनाई है। निश्चायक रूप से यह साबित करने के लिये कोई साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी का कभी भी उससे शादी करने का इरादा नहीं था। शायद वह ऐसा करना चाहता था, लेकिन प्रबल विरोध के डर से अपने परिवार के सदस्यों को अपने इरादे का खुलासा करने के लिए पर्याप्त साहस जुटाने में सक्षम नहीं था। यहां तक कि अभियोक्त्री ने भी कहा कि उसे उस पर पूरा विश्वास था। यह ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोक्त्री के गर्भवती होने के कारण मामला जटिल हो गया। इसलिए, अभियोक्त्री और उसके भाई परिणामी दबाव के कारण अपीलार्थी ने उससे दूरी बना ली।

इस मामले में अभियोजन पक्ष के सामने एक और कठिनाई है। इस प्रकृति के मामले में धारा 90 आई.पी.सी. को लागू करने के लिये दो शर्तों को पूरा किया जाना चाहिए। प्रथम, यह दिखाया जाना चाहिए कि सहमति तथ्य के भ्रम के तहत दी गई थी। द्वितीय, यह साबित किया जाना चाहिए कि सहमति प्राप्त करने वाले व्यक्ति को पता था, या यह मानने का कारण था कि सहमति इस तरह के भ्रम के परिणामस्वरूप दी गई थी। मौजूदा मामले में शादी करने के वादे से प्रेरित होकर अभियोक्त्री का अपीलार्थी के साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमति देना संदिग्ध है। जैसा हमने पहले बताया है, वह जानती थी कि जातियों के आधार पर उसकी अपीलार्थी के साथ शादी होना मुश्किल था। उनका प्रस्ताव दोनों परिवारों के सदस्यों द्वारा कठोर विरोध झेलने के लिये बाध्य था। इसलिए इस बात की विशिष्ट संभावना थी, जिससे वह स्पष्ट रूप से सचेत थी कि अपीलार्थी के वादे के बावजूद उनकी शादी नही हो पाएगी। प्रश्न अब भी यही रहता है कि क्या ऐसा होने के बावजूद, अपीलार्थी को पता था, या विश्वास करने का कारण था, कि अभियोक्त्री ने उसके साथ यौन संबंध बनाने के लिए सहमति उसके वादे के आधार पर इस विश्वास के परिणामस्वरूप दी थी कि वे नियत समय में शादी कर लेंगे। यह साबित करने के लिए शायद ही कोई सबूत है। इसके विपरीत मामले की परिस्थितियाँ इस निष्कर्ष का समर्थन करती हैं कि अपीलार्थी के पास यह विश्वास करने का कारण था कि अभियोक्त्री द्वारा दी गई सहमति एक-दूसरे के लिए उनके गहरे प्यार का

परिणाम थी। यह विवादित नहीं है कि वे एक-दूसरे से गहरा प्यार करते थे। वे अक्सर मिलते थे, और ऐसा प्रतीत होता है कि अभियोक्त्री ने उसे स्वतंत्रता की अनुमति दी थी, जो केवल उस व्यक्ति को दी जाती है जिसके साथ वह गहरा प्यार करता है। यह भी महत्वहीन नहीं है कि अभियोक्त्री चुपके से अपीलार्थी के साथ रात के 12 बजे एक सुनसान जगह पर चली गई। आमतौर पर ऐसे मामलों में ऐसा तब होता है, जब दो युवा प्यार में पागल हो जाते हैं, तो वे एक-दूसरे से कई बार वादा करते हैं कि जो भी हो, वे शादी कर लेंगे। अभियोक्त्री ने कहा कि अपीलार्थी ने भी एक से अधिक अवसरों पर ऐसा वादा किया था। ऐसी परिस्थितियों में, वादा सभी महत्व खो देता है, विशेष रूप से जब वे भावनाओं और जुनून से उबर जाते हैं और खुद को ऐसी स्थितियों और परिस्थितियों में पाते हैं जहां वे एक कमजोर क्षण में यौन संबंध बनाने के प्रलोभन के आगे झुक जाते हैं। मौजूदा मामले में, अभियोक्त्री ने अपीलार्थी के साथ, जिससे वह गहरा प्यार करती थी, यौन संबंध बनाने के लिये स्वेच्छा से सहमति दी, इसलिए नहीं कि उसने उससे शादी करने का वादा किया था, बल्कि इसलिए कि वह भी उससे शादी करना चाहती थी। इस प्रकार, अपीलार्थी के ज्ञान पर यह आरोप लगाना बहुत कठिन होगा कि अभियोक्त्री ने अपने वादे से उत्पन्न तथ्य के भ्रम के परिणामस्वरूप सहमति दी थी। किसी भी स्थिति में, अपीलार्थी के लिए यह जानना संभव नहीं था कि अभियोक्त्री के मन में क्या था जब

उसने सहमति दी, क्योंकि सहमति देने के लिए उसके पास एक से अधिक कारण थे।

उपरोक्त निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, हम इसे आवश्यक नहीं मानते हैं कि इस सवाल पर विचार करें कि क्या बलात्संग के मामले में तथ्य का भ्रम धारा 375 के चौथे व पाँचवे खंड के तहत आने वाली परिस्थितियों तक ही सीमित होना चाहिए, अथवा क्या धारा 90 मे बताई गई तथ्य के भ्रम के तहत दी गई सहमति को व्यापक रूप से लागू किया जा सकता है, जिसमें उन परिस्थितियों को शामिल किया जा सके, जो आई.पी.सी. की धारा 375 में उल्लिखित नहीं है।

परिणामस्वरूप, यह अपील सफल होनी चाहिए, और तदनुसार अनुज्ञात की जाती है। अपीलार्थी को दोषी ठहराने और आई.पी.सी. की धारा 376 के तहत दंडनीय अपराध में सजा सुनाने के आक्षेपित निर्णय और आदेश को अपास्त किया जाता है और अपीलार्थी को आरोप से दोषमुक्त किया जाता है। चूंकि अपीलार्थी को विशेष अनुमति दिए जाने पर आत्मसमर्पण करने से छूट दी गई थी, इसलिए उसकी रिहाई के लिए आगे किसी आदेश की आवश्यकता नहीं है।

अपील अनुज्ञात की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी **दलिप सिंह** (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।